स्कूली किताबों की भाषा

स्कूली किताबों को बच्चों को ध्यान में रखकर लिखी जाने का दावा किया जाता है। फिर बच्चों को किताबों से यह शिकायत क्यों रहती है कि किताबों की भाषा उनके आसपास के माहौल से मेल नहीं खाती, किताबों में कठिन शब्द और कुछ अस्पष्ट उदाहरण होते हैं, जिसकी वजह से पाठ समझ नहीं आता।
क्या बच्चों की इन शिकायतों को दूर कर पाना संभव है?

उमेश चंद्र चौहान

मैं कुछ वर्षों से राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, भोपाल में प्राथमिक कक्षाओं की विज्ञान व पर्यावरण अध्ययन की पाठ्यपुस्तकों के लेखन एवं सम्पादन में सहयोग करता रहा हूं। इसी सिलसिले में एक बार घर से रवाना हो रहा था कि मेरी छोटी बेटी 'कीर्ति' ने मुझे याद दिलवाया।

"पापा, आप किताब लिखने तो जा रहे हैं पर ध्यान रखना मैंने क्या कहा था?"

मैंने कहा, "हां बेटी, मुझे अच्छी तरह याद है तुमने क्या कहा था। मैं अपने मित्रों को भी तुम्हारी बात ज़रूर बताऊंगा।"

आप जानना चाहेंगे वो कौन-सी बात की याद दिलवा रही थी?

कीर्ति जब प्राथमिक शाला में पढ़ती थी तब उसकी हमेशा यही शिकायत रहती थी, "पापा किताब में कठिन शब्द क्यों होते हैं? ऐसे शब्द जो हमारी

समझ में आते ही नहीं। चाहे विज्ञान हो, गणित हो या हिन्दी के पाठ – जो भाषा हम बोलते हैं, वैसी ही भाषा में किताब क्यों नहीं लिखते?''

उसने अपनी बात जारी रखी, ''मैडम कह देती हैं पाठ घर से पढ़कर आना, हम कल पूछेंगे। पर पढ़ने के बाद कुछ समझ में तो आना चाहिए। जिसके घर कोई बताने वाला न हो वह किससे पूछकर समझे? क्या फायदा केवल पाठ पढ़ने से।''

इस बारे में उसने 'चकमक' पत्रिका में सवालीराम के नाम एक पत्र भी लिखा था – 'मेरी किताब के कठिन शब्द'। उसका कहना है कि जब हम 'बगीचा' समझते हैं, बोलते हैं, तब 'उद्यान' लिखने से क्या फायदा। हम कब बोलते हैं कि 'चलो उद्यान में चलते हैं'। उसकी बात को पुस्तक के इस वाक्य से अच्छी तरह से समझा जा सकता है।

''वर्तमान में यूरोप में अधिकांश देशों में हिन्दी का अध्ययन अध्यापन सतत् रूप से उत्तरोत्तर दिशा में अग्रसर हो रहा है।''

इसी गद्यांश को इस प्रकार भी लिखा जा सकता था – ''आजकल यूरोप के बहुत सारे देशों में हिन्दी को पढ़ा और पढ़ाया जा रहा है।'' मैं समझता हूं दूसरा तरीका कहीं अधिक सरल एवं बालकों के लिए ग्राह्य है।

किताब में प्रस्तुतिकरण

इसी प्रकार विज्ञान में भी अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं जैसे शरीर के आंतरिक अंगों के अंतर्गत कंदुक-गर्तिका या कन्दुक खल्लिका (Ball and Socket Joint) पढ़ाते समय बच्चों को समझा या रटा दिया जाता है कि कंधे और कूल्हे में इस प्रकार का जोड़ है। बच्चे इस शब्द और संबंध को रटकर याद करते हैं, समझकर कतई नहीं।

कोहनी और घुटने के जोड़ों (कब्जा संधि) के लिए दरवाज़े में लगे कब्जे का उदाहरण दिया जाता है। अधिकांश दरवाज़े मात्र 90 अंश ही खुलते हैं; जबकि हमारे हाथ, कोहनी के जोड़ पर 180 अंश तक खुल जाते हैं। यहां अवधारणाएं और उनके लिए दिए जाने वाले उदाहरण अस्पष्ट हैं। इसके लिए पेटी या अटैची के कब्जे का उदाहरण देना कहीं ज़्यादा बेहतर हो सकता है।

इस तरह की आंतरिक रचनाओं को समझने के लिए सरल एवं व्यावहारिक उदाहरण या मॉडल इस्तेमाल करना ज़्यादा उपयुक्त होता है। आइए हड्डियों और मांसपेशियों की अवधारणा को एक ऐसे उदाहरण के ज़रिए समझने की कोशिश करें।

थोड़ी-सी रुई लो। अपने पेन के बराबर रुई की बत्ती बनाओ। बत्ती

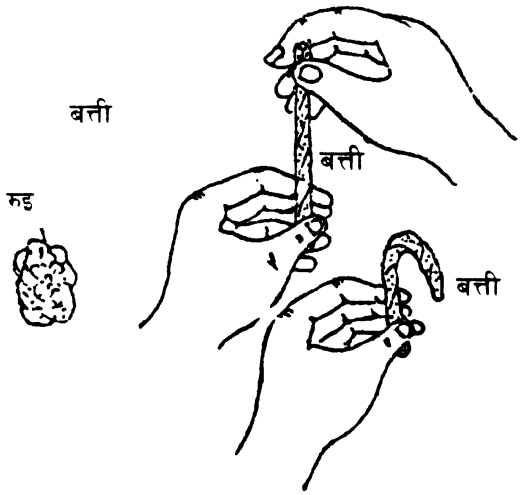

चित्र-1: रुई मे बत्ती बनाकर उसे सीधा खड़े करने पर वह मुड़ जाती है जिससे उसके भीतर किसी कड़ी चीज़ का अभाव समझ में आता है।

को चित्र में बताए अनुसार पकड़ो। अब ऊपर वाला हाथ छोड़ दो।

प्रश्न: क्या, बत्ती खड़ी है या मुड़ गई?

अब एक तार का टुकड़ा या काड़ी लो। उस पर रुई लपेट कर फिर से बत्ती बनाओ। तार या काड़ी का एक सिरा पकड़कर बत्ती को खड़ी करो।

प्रश्न: इस बार बत्ती क्यों नहीं मुड़ी?

बत्ती को दबाकर देखो।

प्रश्न: क्या तुम्हें बत्ती के अंदर छिपी काड़ी महसूस होती है?

अपनी कोहनी और कलाई के बीच कई जगह दबाकर देखो।

प्रश्न: क्या तुम्हें चमड़ी के अंदर कुछ कठोर लकड़ी जैसी कोई चीज़ महसूस होती है?

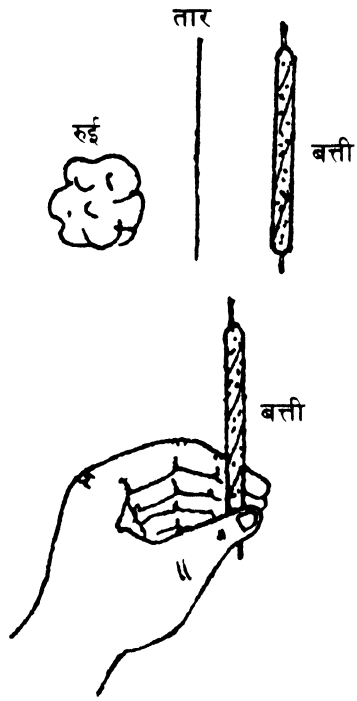

चित्र-2: रुई और तार की मदद से बत्ती बनाकर हड्डी की अवधारणा को समझना।

ये शरीर के अंदर छिपी हड्डियां हैं।

प्रश्न: क्या तुम्हें चमड़ी के नीचे गद्देदार नरम मांसल भाग भी महसूस हुआ?

ये हमारी मांस पेशियां हैं।

जिस प्रकार काड़ी पर रुई ढंकी थी, उसी प्रकार हड्डियों पर मांस

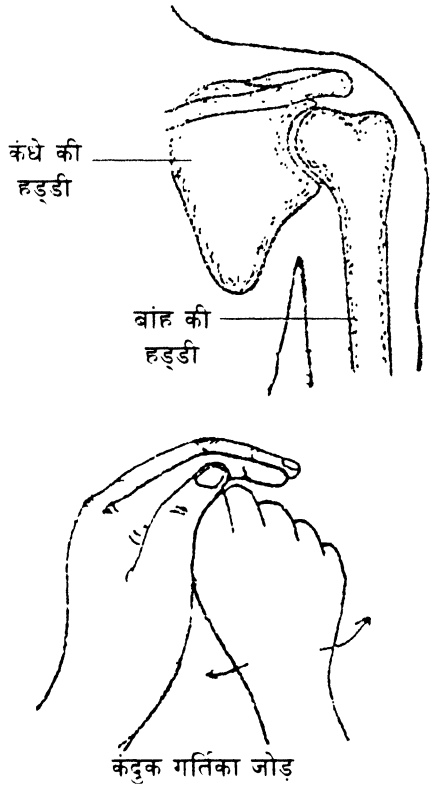

चित्र-3: कंधे की हड्डी किस तरह काम करती है इसे समझने के लिए इस तरह की युक्ति काम में लाई जा सकती है।

पेशियां चिपकी होती हैं। एक हड्डी पर एक से अधिक मांस पेशियां होती हैं। ये रचनाएं चमड़ी के नीचे ढंकी रहती हैं।

मुझे कंदुक-गर्तिका जोड़ के लिए भी हमेशा किसी मॉडल की तलाश करना पड़ती थी लेकिन अब इसके लिए भी एक सुझाव है।

अपने एक हाथ के पंजे को नाग के फन की तरह बनाओ। हथेली और अंगुलियों से बने गड्ढे में दूसरे हाथ की मुट्ठी बंद करके रखो। चित्र में बताए अनुसार मुट्ठी को चारों ओर घुमाओ। ठीक इसी तरह तुम्हारे कंधे की हड्डी में बने गड्ढे में बांह की हड्डी घूमती है। तुम्हारी जांघ की हड्डी और कूल्हे की हड्डी का जोड़ भी इसी तरह का है।

इस तरह हम एक अमूर्त अवधारणा को मूर्त उदाहरण/मॉडल की सहायता से ज़्यादा सरल ढंग से बच्चों को समझा सकते हैं और इन अवधारणाओं को बच्चों के स्तर के अनुकूल बना सकते हैं।

हम किताब लिखते समय शायद यह भूल जाते हैं कि बच्चों का स्तर क्या है? लेखक स्वयं की योग्यता को लेखन के माध्यम से बालकों पर थोप देते हैं। मुंशी प्रेमचंद जैसे लेखकों ने बहुत ही सरल शब्दों में कई रोचक किस्से-कहानियां लिखी थीं जो आज भी लोकप्रिय हैं। उच्च पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग भाषा साहित्य लेखन व अध्ययन के लिए सुरक्षित रखना ज़्यादा उचित होगा।

शिक्षकों की भागीदारी

जिन कक्षाओं के लिए किताबें लिखी जा रही हैं उन कक्षाओं को पढ़ाने वाले अनुभवी शिक्षकों को लेखन

कार्यशालाओं में आमंत्रित किया जाना ज़रूरी है। आमतौर पर पाठ्य-पुस्तक लेखन कार्यशालाओं में ऐसे अनुभवी शिक्षकों के लिए कोई जगह नहीं होती। हो सकता है कि प्राथमिक शाला में अध्यापन कर रहे शिक्षकों में लेखन क्षमता का अभाव हो, लेकिन वे लेखकों द्वारा लिखी जा रही विषय वस्तु की समालोचना करके उसी समय भाषा, अवधारणा या स्तर संबंधी टिप्पणी देकर किताब को बालकों के लिए अधिक उपयोगी बनाने में तो मददगार हो ही सकते हैं। इसलिए ऐसे अनुभवी शिक्षकों का अपना महत्व है।

अक्सर नये लेखकों को सम्मिलित करने में यह कहकर आना-कानी की जाती है, 'अरे! उनको लेखन अनुभव नहीं है, उन्होंने कोई पुस्तक समीक्षा नहीं की है, विषयवस्तु पर टिप्पणी नहीं की है वगैरह-वगैरह।' लेकिन यह भी सच है कि यदि आप व्यक्ति को अवसर ही नहीं देंगे तो उसे और आपको उस व्यक्ति की क्षमता के बारे में पता कैसे चलेगा। अक्सर शिक्षक हर कठिन विषय वस्तु को अपने ढंग से सरल करके बच्चों को समझाने का प्रयास करते हैं। वे आपस में पुस्तक की समीक्षा, आलोचना ज़रूर करते हैं किन्तु टिप्पणी लिखने से अक्सर कतराते हैं।

क्या हम पाठ्य पुस्तक लेखन कार्यशालाओं के पहले अनुभवी शिक्षकों की एक अग्रिम कार्यशाला का आयोजन नहीं कर सकते, जो पुरानी किताबों की समीक्षा करके उसकी अच्छाइयों और कमियों को उजागर करे? यदि ऐसा किया जाए तो मैं समझता हूं कि फिर बालकों को ये शिकायत कतई नहीं होगी कि किताब की भाषा इतनी बेगानी क्यों है।

उमेश चन्द्र चौहान: हरदा ज़िले की टिमरनी तहसील में विज्ञान शिक्षक हैं। होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के स्रोतदल के सदस्य। लेख में दिए गए सब चित्र भी उन्होंने बनाए हैं।

यह लेख राजस्थान से प्रकाशित होने वाली, 'शिविरा पत्रिका' के मार्च 1996 के अंक में प्रकाशित हो चुका है।